International Indexed &Referred Research Journal, May, 2012. ISSN- 0975-3486, RNI-RAJBIL 2009/30097;VoL.III *ISSUE-32

शोध पत्र– वाणिज्य

लघ् उद्योगों पर जोखिम पूंजी एवं तकनीकी सुविधा का प्रभाव

* डॉ. एस. डी. पाटीदार ** डॉ. गोपालदास नायक

* शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
** एस. एन. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)

May, 2012

प्रस्तावना

पूँजी बाजार में उभरी नई प्रवृत्तियों की प्रतिक्रिया के अंतर्गत भारतीय पूँजी बाजार में कुछ निजी समता कोष ने प्रवेश किया है। ऐसे माहौल में जहाँ सूचना का प्रवाह अपूर्ण और धीमा हो नई परियोजना की पहचान और मूल्यांकन बहुत खर्चीला होता है। और निजी समता के लिये यह संभव नही है कि बहुत छोटी परियोजना का वित्त पोषण किया जा सके। नई परियोजना शुरू करने वालो के लिये जोखिम पूँजी की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है, इसे अपने जोखिम का विविधीकरण करने का अवसर मिले। निवेशकों द्वारा दो तरह के जोखिम वहन किया जाता है, प्रथम उद्यमियों द्वारा अनियंत्रित उपयोग तथा शासन द्वारा नियंत्रित वितरण आदि, फर्म के संसाधनों के नियंत्रण कर्ता से जुड़ी अपेक्षाऐं प्रभावित होती है। अच्छी संस्थाऐं उद्यमियों को संसाधनों के निवेश तथा तकनीकी सुधार के लिये मदद करती है। जिससे प्राप्त लाभ का वितरण निवेशक, प्रबंधक, कर्मचारी, उद्यमी, इत्यादि के बीच होता है।

भारत में जिस तरह से जोखिम पूँजी उद्योग का विकास हो रहा है वह चिंता का विषय है। भारत को विश्व के छोटे जोखिम पूँजी उद्योग का संदिग्ध गौरव हासिल है यहाँ तक कि एशिया के अन्य देशों में जोखिम पूँजी उद्योगों के मुकाबले भी भारत का दर्जा बहुत नीचे है। दीर्घकालीन परिचालन कोष लघु एवं मध्यम इकाइयों के लिये स्थाई व्यवस्था का आधार रहा है। इस कोष में प्रमुख योगदान भारतीय रिजर्व बैंक का होता है। लघु एवं मध्यम इकाइयों को राज्य औद्योगिक विकास निगमों और राज्य वित्त निगमों द्वारा दिये गये सावधि ऋणों की सुविधा मुहैया करवाने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। छोटी इकाइयों के पास ऐसा कोई भी व्यवस्थित तरीका नही है जिससे वे पूँजी बाजार में अपनी साख की अच्छी जानकारी दे सके तथा अपनी जोखिम पर पूँजी प्राप्त कर सके अतः उभरते आर्थिक विकास के परिप्रेक्ष्य में लघु इकाइयों को मदद की आवश्यकता पड़ती है।

परिकल्पना

वित्तीय संसाधन एवं औपचारिक संस्थायें लघु इकाईयों के विकास में योगदान देती है।

समस्या

वित्तीय संसाधन एवं औपचारिक संस्थाये लघु इकाईयों के विकास में योगदान लघु इकाइयों की परम्परागत आवश्यकता को पूरा करने वाली वित्तीय व्यवस्था का क्षय हो रहा है और नये अवसर बड़े उद्योगों के लिये सृजित हो रहे है जो उभर रही आर्थिक इकाईयों के लिये समस्या का विषय है। यह ऐसे समय घटित हो रही है जब लघु इकाइयों की पूँजी की माँग बहुत अधिक बढ़ रही है क्योंकि बगैर पूँजी के नये बाजार में अवसर खोजना मुश्किल होता है। आर्थिक विकास की ऊँची दर हालि करने के लिये जिस तरीके से तेज औद्योगिक विकास की जरूरत है आने वाले वर्षों में लघु इकाइयों के विकास में मदद पहुँचाने

चालित चयनित देशों में लघु फर्मों का योगदान (चयनित वर्ष)

(प्रतिशत में)

देश	वर्ष	फर्मों की संख्या	रोजगार	कुल उत्पादन में योगदान
ऑस्ट्रेलिया	1991	92.0	35.7	23.1
ऑस्ट्रिया	1990	75.5	20.2	14.6
चीन	1991	58.9	6.0	5.2
कोलम्बिया	1993	93.4	40.5	27.4
डेनमार्क	1991	98.3	55.4	46.5
फ्रांस	1990	98.6	46.7	39.0
हाँग–काँग	1993	98.8	58.4	53.8
भारत	1992	76.2	17.3	13.4
जापान	1991	98.1	66.5	–
स्पेन	1991	99.4	67.5	–
स्वीट्जरलैंड	1991	97.5	39.5	–

स्त्रोत – वर्ल्ड डेवेलपमेंट रिपोर्ट 2002, हिन्दुस्तान पब्लिशिंग कार्पोरेशन नई दिल्ली,पृ.63

के लिये नये उद्यमियों को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। किन्तु इसके साथ ही लघु इकाइयों की पूँजी व्यवस्था का उचित मूल्यांकन करने की आवश्यकता है। आज नव उद्यमी में उद्यमिता की भावना पहले की अपेक्षा अधिक है। कम्प्युटरीकरण और संचार प्रौद्योगिकी में तेजी से हो रहे विस्तार के करण इस क्षेत्र में अवसर तो बढ़ ही रहे है, परन्तु लघु इकाइयों की क्षमता और उन्हे बेहतर बनाने में पूँजी के अभाव में छोटी इकाइयाँ मामूली समस्या को सहन नही कर पाती। लघु इकाइयाँ अपने अस्तित्व को बचाने के लिये ऋण पर अधिक निर्भर रहती है।

1991 के बाद से आयात–नीति में भारी बदलाव हुए है। पहले देश में बहुत कम उत्पादों के मुक्त आयात की अनुमति थी और अधिकांश आयात के लिये लाइसेंस प्राप्त करना होता था। वही अब उपभोक्ता वस्तुओं को छोड़कर लगभग सभी वस्तुओं का मुक्त आयात संभव हो गया है। इसी कारण पहले की नियंत्रित व्यवस्था के अंतर्गत लघु इकाइयों के लिये आरक्षित सभी वस्तुओं के आयात पर पावंदी लगी हुई थी। नतीजन आरक्षित वस्तुओं का उत्पादन करने वाली लघु इकाइयों को भारतीय कम्पनी तथा विदेशी कम्पनियों के मुकबाले संरक्षण हुआ था परन्तु व्यापार नीति में उदारीकरण के बाद अब लघु इकाइयों के लिये अधिकतर वस्तुओं का मुक्त आयात संभव हुआ है।

बड़ी इकाईयों की अपेक्षा लघु इकाइयों में आंतरिक स्त्रोतों द्वारा संसाधनों का आपूर्ति की जाती है। विकासशील देशों में संस्थागत कारकों से लघु इकाइयों के विकास बाधित होते है।

परिणाम

भारत में उभरते हुये आर्थिक माहौल में बड़ी कम्पनी को नई संचालन लागत से मुक्ति मिली है। इन कम्पनीयों को उत्पादन शुरू करने से पहले लाइसेंस प्रक्रिया में कठिनाई नहीं आती थी। सार्वजनिक क्षेत्रों के लिये आरक्षित क्षेत्र अब निजीकरण की ओर बढ़ रहे है। इसके आधार पर मंजूरी हासिल करने में लगने वाली लागत से बड़ी कम्पनियों को काफी राहत मिली है। इस प्रकार विस्तार, विविधीकरण और सहायक कम्पनियों का विलय करने के लिये विशेष अनुमति लेने की जरूरत नही रह गई। संबंधित व्यवस्था को सरल और कारगर बना दिये जाने के बाद बड़ी कम्पनियों केा अन्य संचालन लागतों में कमी आई है। जैसे प्रोद्योगिकी की खरीद की प्रक्रिया विदेशी मुद्रा भुगतान करने या विदेशी श्रम शक्ति को प्रयुक्त करने आदि के मामले में अब कम्पनियों को पहले की अपेक्षा कम परेशानियाँ आती है। वहीं दूसरी ओर लघु इकाइयों की संचालन लागत स्थिर रही है। लघु इकाइयों को सबसे अधिक हानि ''कपट पूर्ण इंस्पेक्टर राज'' के कारण उठाना पड़ रही है। लघु इकाइयाँ सामाजिक सुरक्षा, चिकित्सा, बीमा और श्रम कानूनों के कारण कागजी कार्यवाही तथा नौकरशाही के दुष्चक्र में उलझ कर रह गये है। इसी तरह पंजीकरण प्रक्रिया व अन्य व्यावसायिक कानूनों के मामलों में बड़ी व छोटी कम्पनियों में कोई भेद नहीं रखा गया है।

परिणाम

निजी स्तर पर बड़ी कम्पनियों के साथ पर्याप्त पूँजी संसाधन है लेकिन लघु इकाइयाँ, पूँजी संसाधन के मामले में काफी पिछड़ी हुई है। वैसे भी बड़ी कम्पनियों की निवेश क्षमता अधिक होती है, वही लघु इकाइयाँ भारी भरकम निवेश करने की स्थिति में नही होती है। व्यावसायिक गतिविधियाँ संरक्षण के दौर में लघु इकाइयों को सरकार की ओर से रियायती दरों पर या निःशुल्क ये सेवाएँ उपलब्ध करवाई जाती थी वही दूसरी ओर बड़ी कम्पनियों को उपलब्ध सेवाओं की कीमत चुकानी पड़ती थी। परन्तु आज लघु इकाइयों के मुकाबले बड़ी इकाइयों के पास अपनी प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता अधिक है, विदेशी कम्पनियों के आने से बड़ी कम्पनियों को बेहतर प्रबंध सेवाएँ मिल रही है, जिनसे बड़ी कम्पनियों बेहतर प्रशिक्षिण मानव संसाधन चुनने की आजादी तथा वांछित हुनरवाले कर्मचारियों की सेवाएँ लेने में सक्षम हो चुके है। इस प्रकार बड़ी कम्पनियों के कर्मचारी को विदेशी साझेदार कम्पनी के संयंत्र में कार्य करने तथा पेशेवर प्रशिक्षिण प्रबंधकों को नये अवसर मिले है।

निष्कर्ष

लघु इकाई क्षेत्र के लिये परंपरागत समर्थन सेवाएँ कमजोर पड़ चुकी है। अर्द्धशिक्षित तथा अकुशल श्रमिकों से काम चलाना बड़ चुकी है, परन्तु बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आने से लघु इकाइयों में शिक्षित तथा कुशल श्रमिकों की माँग बढ़ी रही है परन्तु लघु इकाई सक्षम नही है कि ऐसी महँती सेवाएँ ले सके अतः अपने अस्तित्व को बचाने में लगी हुई है।

संदर्भ ग्रंथ

1. आबिद हुसैन : लघु उद्योगों के बारे में विशेषक्ष समिति की रिपोर्ट, विकास आयुक्त उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार नई दिल्ली, 1997
2. जेम्स डी. वुलफेन्सन, वर्ल्ड डेवलमेन्ट रिपोर्ट–2002, हिन्दूस्तान पब्लिशिंग कार्पोरेशन, नई दिल्ली